DAILY NEWS BULLETIN

LEADING HEALTH, POPULATION AND FAMILY WELFARE STORIES OF THE DAY

Thursday 20201015

कोरोना का टीका

बच्चों के लिए कोरोना का टीका बनाने पर काम शुरू, अमेरिकी कंपनी फाइजर को मिली अनुमति (Hindustan: 20201015)

https://www.livehindustan.com/national/story-work-begins-on-making-corona-vaccine-for-children-american-company-pfizer-gets-permission-3562149.html

बच्चों के लिए कोरोना का टीका बनाने पर काम शुरू हो गया है। अमेरिकी कंपनी फाइजर को सरकार ने बच्चों पर टीके का परीक्षण करने की अनुमति दी है। कंपनी अगले सप्ताह ट्रायल शुरू करेगी। सबसे पहले 16 व 17 साल के किशोरों पर प्रयोगात्मक टीके का असर देखा जाएगा फिर 12 से 15 साल की आयु के बच्चों पर यह प्रयोग किया जाएगा।

सिनसिनाटी बाल अस्पताल में टीका अनुसंधान केंद्र के निदेशक डॉ. रॉबर्ट फ्रेंक ने बताया कि 90 अभिभावकों ने अपने बच्चों को इस ट्रायल में शामिल कराने की इच्छा जताई है। हम शुरुआत में दर्जन भर बच्चों पर टीके का असर देखेंगे, फिर बड़े समूह पर परीक्षण किया जाएगा। हमें याद रखना होगा कि बच्चों व किशोरों में वायरस से मौत का खतरा कम पर यह शून्य नहीं है। अकेले अमेरिका में 50 हजार बच्चे संक्रमित हो चुके हैं। फ्रेंक के मुताबिक, बच्चों में अबतक जितने मामले आए हैं, असल में संक्रमण उससे ज्यादा है क्योंकि बच्चों में लक्षण बहुत गंभीर नहीं होते, इसलिए माता-पिता को सही अंदाजा नहीं लग पाता।

विशेषज्ञ की राय- बच्चों के लिए टीका बनाना जोखिम भरा

बच्चों की शारीरिक संरचना अलग होती है। उन्हें ट्रायल वैक्सीन की खुराक देना जानलेवा हो सकता है। यही कारण है कि कंपनियां प्रयोगात्मक टीके की खुराक पहले वयस्कों को देकर इसका असर जांचती हैं। फिर इसे किशोरों और उसके बाद छोटे बच्चों को दिया जाता है।- डॉ. पॉल ऑफिट, पेनिसेल्विया विश्वविद्यालय के बाल रोग विशेषज्ञ

इन बातों पर चिंता

1. बच्चों का टीका बड़ों के बाद आएगा: क्लीनिकल इंफेक्शियस डिसीज जर्नल के मुताबिक, बच्चों के लिए कोविड टीका अगले साल सितंबर के बाद ही आ सकेगा क्योंकि अभी तो वयस्कों के लिए ही परीक्षण पूरे नहीं हुए हैं। हालांकि, उम्मीद है कि इस साल के अंत तक वयस्कों के लिए वैक्सीन आ जाएगी।

2. सिर्फ तीन कंपनियां बनाएंगी: सिर्फ तीन कंपनियों ने ही बच्चों पर ट्रायल वैक्सीन के परीक्षण की अनुमति मांगी है। ऑक्सफोर्ड-एस्ट्राजेनेका ने बच्चों पर परीक्षण शुरू कर दिया है। फाइजर अगले सप्ताह शुरूआत करेगी। तीसरी कंपनी चीन की सिनोवैक बायोटेक ने भी जल्द ही बच्चों पर ट्रायल शुरू करने की घोषणा की है।

3. गर्भवती महिलाओं पर भी ध्यान नहीं: गर्भवती व बच्चों को दूध पिलाने वाली मांओं के लिए अलग से टीका बनाने पर अभी ध्यान नहीं गया है। सेंटर फॉर ग्लोबल डेवलपमेंट नामक अमेरिकी थिंकटैंक ने इस पर चिंता जताते हुए कहा कि जो अग्रिम पंक्ति के क्षेत्रों में काम कर रहीं महिलाएं इस श्रेणी में आती होंगी, सरकारें उन्हें कोरोना से कैसे सुरक्षित रख पाएंगी।

शोध : टीका बनने में लगी देरी खतरा बढ़ाएगी

इंग्लैंड जर्नल ऑफ मेडिसिन में प्रकाशित शोध में बताया गया कि जब तक वयस्कों के साथ बच्चों को भी समय पर कोरोना का टीका नहीं मिल जाता, इस महामारी से पूरी तरह सुरक्षा नहीं मिल पाएगी। दूसरी ओर, भले कोरोना से बच्चों के मरने की दर बेहद कम हो पर इस महामारी के कारण बच्चे मल्टी सिस्टम इंफ्लेमेटरी सिन्ड्रोम की जद में आ रहे हैं जो जानलेवा बीमारी है। जर्नल के मुताबिक, इस सिन्ड्रोम से पीड़ित 80% बच्चों को अस्पताल में भर्ती कराना पड़ रहा है, ऐसे में समय पर टीका नहीं आया तो नई पीढ़ी असमय मौत का खतरा झेलेगी।

अच्छी खबर: रूस ने बना ली एक और कोरोना वैक्सीन, Sputnik V के बाद EpiVacCorona का किया दावा (Hindustan: 20201015)

https://www.livehindustan.com/international/story-covid-19-vaccine-updates-russia-approves-second-coronavirus-vaccine-epivaccorona-after-early-trials-3562230.html

पूरी दुनिया में कोरोना वायरस की वैक्सीन बनाने की कवायद जारी है। इस बीच अच्छी खबर है कि रूस ने दावा किया है कि उसने कोरोना वायरस की एक और वैक्सीन बना ली है। शुरुआती ट्रायल के बाद रूस ने अपनी दूसरी कोरोना वैक्सीन को मंजूरी दे दी है। सरकारी अधिकारियों के साथ मीटिंग के दौरान रूसी राष्ट्रपति व्लादिमीर पुतिन ने बुधवार को ऐलान किया कि देश ने दूसरी कोरोना वायरस वैक्सीन 'EpiVacCorona' को शुरुआती ट्रायल के बाद मंजूरी दे दी है। बता दें कि इससे पहले रूस ने कोरोना की स्पूतनिक-5 वैक्सीन बनाई है।

रूसी राष्ट्रपति व्लादिमीर पुतिन ने ने कहा कि अब हमें पहले और दूसरी वैक्सीन का उत्पादन बढ़ाने की जरूरत है। इस वैक्सीन को साइबेरिया में स्थित वेक्टर इंस्टीट्यूट ने बनाया है जो पेप्टाइड आधारित है और कोरोना से बचाव के लिए इस वैक्सीन की दो खुराक देनी होगी। इसे करीब 100 वालंटियर्स पर टेस्ट किया गया है।

समाचार एजेंसी पीटीआई के मुताबिक, दो महीने तक इसका ट्रायल हुआ है और दो सप्ताह पहले इसके शुरुआती अध्ययन के पूरा होने के बाद अब मंजूरी दी गई है। बताया जा रहा है कि इस वैक्सीन के शुरुआती ट्रायल सफल रहे हैं और इस ट्रायल में शामिल होने वाले वालंटियर्स की उम्र 18 से 60 के बीच थी।

हालांकि, वैज्ञानिकों ने अभी तक अध्ययन के परिणाम प्रकाशित नहीं किए हैं। मीडिया से बातचीत में वैक्सीन विकसित करने वाले वैज्ञानिकों ने कहा कि यह कोरोना वायरस से व्यक्ति की रक्षा करने के लिए पर्याप्त एंटीबॉडी का उत्पादन करता है और जो प्रतिरक्षा बनाता है, वह छह महीने तक रह सकता है।

रूस की उप प्रधानमंत्री ततयाना गोलिकोवा को यह वैक्सीन लगाई गई है। उन्होंने पहले कहा था कि वालंटियर के तौरपर उन्होंने भी शुरुआती ट्रायल में हिस्सा लिया था। गोलिकोवा ने कहा है कि देशभर में 40 हजार वालंटियर्स को कोरोना की 'EpiVacCorona' वैक्सीन के अगले चरण के ट्रायल के लिए चुना जाएगा। हालांकि, यह स्पष्ट नहीं है कि क्या टीका व्यापक उपयोग के लिए पेश किया जाएगा,

जबकि परीक्षण अभी भी चल रहे हैं। बता दें कि इससे पहले रूस ने 11 अगस्त को दुनिया की पहली कोरोना वायरस वैक्सीन Sputnik V को मंजूरी दी थी।

कोरोना संक्रमण

कोरोना संक्रमण के बाद पांच महीने के लिए विकसित हो जाती है रोग प्रतिरोधक क्षमता: अध्ययन (Hindustan: 20201015)

https://www.livehindustan.com/lifestyle/story-covid-19-coronavirus-develops-immunity-for-five-months-after-infection-says-recent-study-3560415.html

अमेरिका में भारतीय मूल के एक अनुसंधानकर्ता के अध्ययन में सामने आया है कि एक बार कोरोना वायरस से संक्रमित होने के बाद शरीर में कम से कम पांच महीने के लिए कोविड-19 के प्रति रोग प्रतिरोधक क्षमता विकसित हो जाती है।

एरिजोना विश्वविद्यालय के अनुसंधानकर्ताओं ने कोरोना वायरस से संक्रमित हुए लगभग छह हजार लोगों के नमूनों में उत्पन्न हुए एंडीबॉडी का अध्ययन किया। विश्वविद्यालय में एसोसिएट प्रोफेसर दीप्ता भट्टाचार्य ने कहा, “हमने स्पष्ट रूप से उच्च गुणवत्ता वाले एंटीबॉडी देखे जो संक्रमण होने के पांच से सात महीने बाद भी उत्पन्न हो रहे थे।”

अनुसंधानकर्ताओं ने बताया कि जब वायरस कोशिकाओं को पहली बार संक्रमित करता है तब प्रतिरक्षा तंत्र, वायरस से लड़ने के लिए कुछ देर जीवित रहने वाली प्लाज्मा कोशिकाओं को तैनात करता है जो एंटीबॉडी उत्पन्न करती हैं। उन्होंने कहा कि संक्रमण होने के 14 दिन बाद तक रक्त की जांच में यह एंटीबॉडी सामने आती हैं।

अनुसंधानकर्ताओं ने कहा कि प्रतिरक्षा तंत्र की प्रतिक्रिया के दूसरे चरण में दीर्घकाल तक जीवित रहने वाली प्लाज्मा कोशिकाएं पैदा होती हैं जो उच्च गुणवत्ता वाली एंटीबॉडी बनाती हैं जिनसे लंबे समय तक रोग प्रतिरोधक क्षमता बनी रहती है।

भट्टाचार्य और उनके सहयोगियों ने कई महीनों तक कोरोना वायरस से संक्रमित लोगों में एंटीबॉडी के स्तर का अध्ययन किया। अनुसंधानकर्ताओं को पांच से सात महीने तक रक्त की जांच में कोरोना

वायरस एंटीबॉडी प्रचुर मात्रा में मिले। उनका मानना है कि प्रतिरोधक क्षमता इससे अधिक समय तक रह सकती है।

संक्रमण के बाद शरीर में कोरोना संक्रमण के खिलाफ कैसे बनती है इम्यूनिटी, वैज्ञानिकों ने किया खुलासा (Dainik Jagran: 20201015)

https://www.jagran.com/world/america-researcher-found-immunity-against-coronavirus-may-last-for-several-months-20876855.html

वैज्ञानिकों का कहना है कि हमें कोरोना संक्रमण के पांच से सात महीनों बाद भी मरीजों में उच्च गुणवत्ता वाली एंटीबॉडी का पता चला है। वैज्ञानिकों की मानें तो कोरोना मरीजों में जो एंटीबॉडी विकसित होती हैं वह लगभग पांच महीनों तक बनी रह सकती हैं।

वाशिंगटन, पीटीआइ। कोरोना संक्रमण के बाद शरीर में एंटीबॉडी का निर्माण कैसे होता है वैज्ञानिकों ने इस बारे में खुलासा किया है। शोधकर्ताओं के मुताबिक जब वायरस पहली बार कोशिकाओं को संक्रमित करता है तो प्रतिरक्षा प्रणाली (इम्यून सिस्टम) अल्पकालिक प्लाज्मा कोशिकाएं बनाती हैं। यही कोशिकाएं वायरस से लड़ने के लिए एंटीबॉडी बनाती हैं। इन एंटीबॉडी को संक्रमण के 14 दिन के भीतर ब्लड टेस्ट में देखा जा सकता है।

शोधकर्ताओं ने कहा कि इम्यून रिस्पांस का दूसरा चरण लंबे समय तक जीवित रहने वाली प्लाज्मा कोशिकाओं का निर्माण करती हैं, जो उच्च गुणवत्ता वाली एंटीबॉडी बनाती हैं। अमेरिका में भारतीय मूल के शोधकर्ता के नेतृत्व में किए गए अध्ययन से पता चला है कि कोरोना मरीजों में जो एंटीबॉडी विकसित होती हैं वह लगभग पांच महीनों तक बनी रह सकती हैं।

कोरोना संक्रमित लगभग 6,000 लोगों में बनी एंटीबॉडी का अध्ययन करने के बाद एरिजोना विश्वविद्यालय (University of Arizona) के शोधकर्ताओं ने यह बात कही है। विश्वविद्यालय की एसोसिएट प्रोफेसर दीप्ति भट्टाचार्य ने कहा कि हमें कोरोना संक्रमण के पांच से सात महीनों बाद भी मरीजों में उच्च गुणवत्ता वाली एंटीबॉडी का पता चला है।

इबोला के इलाज की पहली दवा को मंजूरी दे दी।

जनरल इम्यूनिटी में बुधवार को प्रकाशित अध्ययन में प्रोफेसर जंको निकोलिच जुगिच ने कहा कि कोरोना के खिलाफ इम्यूनिटी को लेकर कई तरह की चिंताएं व्यक्त की गई हैं और लगातार यह बात कही जाती रही है कि यह स्थायी नहीं है। हमने इस अध्ययन का उपयोग इस प्रश्न का उत्तर खोजने के लिए किया और पाया कि इम्यूनिटी कम से कम पांच महीनों तक बरकरार रह सकती है।

एसोसिएट प्रोफेसर दीप्ति भट्टाचार्य और प्रोफेसर जंको निकोलिच जुगिच ने कोरोना मरीजों में बनी एंटीबॉडी का कई महीनों तक विश्लेषण के बाद यह निष्कर्ष निकाला। शोधकर्ताओं ने पाया कि कोरोना एंटीबॉडी कम से कम पांच से सात महीनों तक ब्लड टेस्ट में मौजूद हैं।

Scientists warn of aggravated Covid-19 spread in winter via respiratory droplets (Hindustan Times: 20201015)

https://www.hindustantimes.com/health/scientists-warn-of-aggravated-covid-19-spread-in-winter-via-respiratory-droplets/story-OWGWqUnat6Mc5OEAjgjpJL.html

The modelling study, published in the journal Nano Letters, also noted that the currently followed physical distancing guidelines are inadequate in curbing the transmission of Covid-19.

Colorized scanning electron micrograph of an apoptotic cell (red) infected with coronavirus particles. For representational purposes.

While transmission of the novel coronavirus as small aerosol particles is more significant in summer, direct contact with respiratory droplets may be more pronounced in the winter months, according to a new research.

The modelling study, published in the journal Nano Letters, also noted that the currently followed physical distancing guidelines are inadequate in curbing the transmission of Covid-19.

“We found that in most situations, respiratory droplets travel longer distances than the 6-foot social distance recommended by the CDC,” said Yanying Zhu, a co-author of the study from the University of California (UC) Santa Barbara in the US. In indoor environments such as walk-in refrigerators and coolers, where temperatures are low and humidity is high to keep fresh meat and produce from losing water in storage, the scientists said this effect is increased

with the droplets transmitting to distances of up to 6 metres (19.7 feet) before falling to the ground.

They said in such environments, the virus is particularly persistent, remaining "infectious from several minutes to longer than a day in various environments." "This is maybe an explanation for those super-spreading events that have been reported at multiple meat processing plants," Zhu said.

At the opposite extreme, in hot and dry places, the researchers said respiratory droplets more easily evaporate. In such conditions, they said the evaporated droplets leave behind tiny virus fragments that join the other aerosolised virus particles that are shed as part of speaking, coughing, sneezing and breathing.

"These are very tiny particles, usually smaller than 10 microns. And they can suspend in the air for hours, so people can take in those particles by simply breathing," said study lead author Lei Zhao. In summer, the scientists said aerosol transmission may be more significant compared to droplet contact, while in winter, droplet contact may be more dangerous. "This means that depending on the local environment, people may need to adopt different adaptive measures to prevent the transmission of this disease," Zhao said. The scientists recommended greater social distancing if the room is cool and humid, and finer masks and air filters during hot, dry spells.

According to the researchers, hot and humid environments, and cold and dry ones, did not differ significantly between aerosol and droplet distribution.

They believe the findings could serve as useful guidance for public health decision-makers in efforts to keep the COVID-19 spread to a minimum. "Combined with our study, we think we can maybe provide design guidelines for the optimal filtering for facial masks," Zhao said. He added that the research could be used to quantify real exposure to the virus -- how much virus could land on one's body over a certain period of exposure. According to the scientists, the insights, "may shed light on the course of development of the current pandemic, when combined with systematic epidemiological studies."

Covid-19: What you need to know today (Hindustan Times: 20201015)

https://epaper.hindustantimes.com/Home/ArticleView

Antibody tests administered to a huge swathe of the population (or sero surveys as they are called) have shown that a significant proportion of the Indian population has been exposed to the Sars-CoV-2 virus which causes the coronavirus disease.

How significant?

A previous instalment of this column, Dispatch 158 on September 15 (scan QR code #1 below) attempted to address that question. The answer (based on results of sero surveys conducted across the country, and some conservative assumptions): 15% of the urban population and around 5% to 7.5% of the rural population can be expected to have been infected with the virus. Assuming a rural population of 850 million and an urban of 450 million, and taking the rural infection rate as 6.25%, the weighted infection rate for the country is around 12%. This is not a measure of those with current infections, but those who have been infected and cured (many times without their knowledge).

India's positivity rate for the week ended October 13 was 6.2%, according to the health ministry. This is consistent with an infection rate of 12%. Both antigen and molecular tests for Covid-19 test for current infections, unlike the antibody tests which look for antibodies — they can only diagnose current infections where antibodies have been produced (one reason why they aren't recommended for diagnosis) or previous exposure — and logic demands that the positivity rate always be lower than the infection (or exposure) rate.

There's been a lot of talk of herd immunity (again) in recent days, especially with the release, last week, of the loftily named Great Barrington Declaration (https://gbdeclaration.org/) which basically calls for building herd immunity. "The most compassionate approach that balances the risks and benefits of reaching herd immunity is to allow those who are at minimal risk of death to live their lives normally to build up immunity to the virus through natural infection, while better protecting those who are at highest risk. We call this Focused Protection," it says. A report in the New York Times suggests that the Trump White House has embraced this declaration.

Because it's important to say this, I will do so straightaway: I do not agree with the course advocated by the declaration, and believe it is downright dangerous. Several experts believe that the only way to achieve herd immunity in the case of the coronavirus disease, without significant loss of lives, is vaccination.

The herd immunity level may be just around 40% instead of the widely believed 60%, according to mathematicians at the University of Stockholm and the University of Nottingham (Dispatch 137 on August 21: scan QR code #2 below); and only around 11% of

people exposed to an infected person are likely to contract Covid-19, according to a team led by Ramanan Laxminarayan of the Centre for Disease Dynamics, Economics & Policy (Dispatch 172 on October 2: scan QR code #3 below). It still does not make sense to pursue an expose-and-infect strategy. That's because some of those infected tend to be superspreaders (8% infect 60%, according to the second study cited above); we do not know enough about the long-term impact of even mild infections; and the mathematicians themselves, in the first study cited above, caveat that the 40% number is not even directional but merely to show how "population heterogeneity affects herd immunity".

Still, sero surveys are important — not so much for assessing when a city or region or country is likely to achieve herd immunity, but to measure prevalence of the infection and the proportion of the population that has been exposed to it. A city or state with a high exposure rate (as measured by the sero survey), can safely assume that with stringent enforcement of mask discipline, social distancing, hand hygiene and rules on public gatherings, it can open up just about anything (including schools) with a lower risk than a city or a state with a lower exposure rate. That's good enough reason for the Union government as well as states to get serious about sero surveys, just as it is good enough reason for them to get serious about the enforcement of Covid-safe behaviour.

India coronavirus numbers explained, Oct 15: Significant decline in daily deaths (The Indian Express: 20201015)

https://indianexpress.com/article/explained/india-coronavirus-active-cases-deaths-recoveries-explained-october-15-6737721/

India coronavirus cases numbers explained: As the number of new infections have come down, so have the number of deaths. On Wednesday, 680 coronavirus-related deaths were reported, the lowest since July 27.

A man wearing a mask reads a newspaper in front of a closed shop in Dharmsala, on Friday, Oct. 9, 2020. (AP Photo: Ashwini Bhatia)

Along with the drop in the number of new infections being detected, there has also been a significant decline in the coronavirus-related deaths being reported every day. For the last twelve days now, the number of deaths have remained below 1,000.

Since August 25, barring a few exceptions, India has been reporting more than 1,000 coronavirus-related deaths every day. On several of these days, India was the largest contributor of coronavirus-related deaths in the world.

But as the number of new infections, rather inexplicably, has come down in the last month, so have the number of deaths. On Wednesday, 680 coronavirus-related deaths were reported from across the country, the lowest since July 27. For the last three days, this tally has remained below 800.

The decline in number of deaths is not surprising, because it indeed is linked to the number of people getting infected. The trend in deaths usually follow the trend in infection numbers with a lag of about two weeks. It's almost been four weeks since the decline in infections began, while the death count has begun to drop in the last two weeks. Yet, sharp drop in the death tally on Thursday is a bit surprising, though welcome.

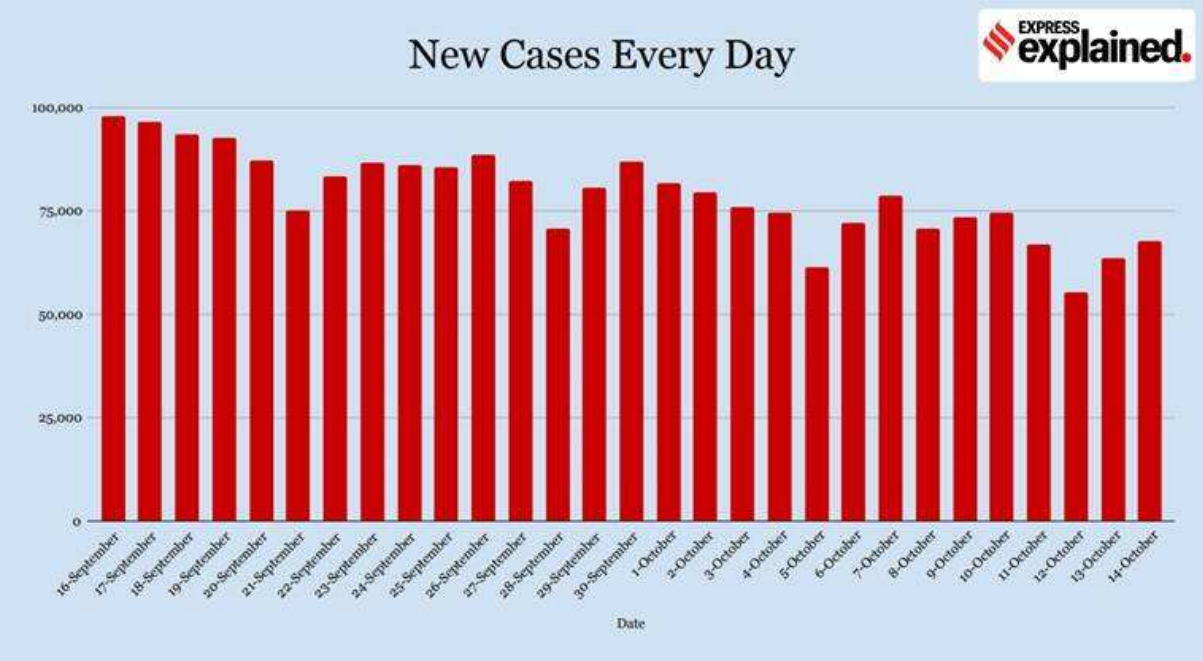

In the last two weeks, about 12,500 coronavirus-related deaths have been reported from India. In the two 14-day periods before that, this number had exceeded 15,000. India has reported the highest number of coronavirus-related deaths in the world after the United States and Brazil.

Meanwhile, Delhi has once again begun to report more than 3,000 new cases in a day. The Delhi numbers had remained below 3,000 for twelve days, but crossed that figure on Tuesday and Wednesday. But it is still too early to say whether the declining trend in Delhi has been reversed.

One state where the decline in cases has been the most impressive is Andhra Pradesh, the state with the second highest caseload in the country. Over a month period, the number of cases have steadily come down from a level of 10,000 a day to less than 4,000 now. On Wednesday, it recorded about 3,900 new cases, the first time that this number had gone below 4,000 on a non-Monday since July 20. From a high of over 8 per cent a day in July, the growth rate has dropped to just about 0.6 per cent a day now.

TOP TEN STATES WITH MAXIMUM CASELOAD

EXPRESS explained.

STATE	TOTAL POSITIVE	NEW CASES	TOTAL RECOVERIES	DEATHS
Maharashtra	1,554,389	10,552	1,316,769	41,332
Andhra Pradesh	767,465	3,892	719,477	6,319
Karnataka	735,371	9,265	611,167	10,217
Tamil Nadu	670,392	4,462	617,403	10,423
Uttar Pradesh	444,711	2,593	401,306	6,507
Delhi	317,548	3,324	289,747	5,898
Kerala	310,140	6,244	215,149	1,100
West Bengal	305,697	3,677	268,384	5,808
Odisha	261,011	1,470	235,763	1,142
Telangana	217,670	1,432	193,218	1,249

Data as on October 14, 2020

Kerala also finally seems to be showing signs of a reduction. In the last three days, its daily infection numbers have been considerably lower than what it has been reporting in recent times. Its growth rate has fallen below three per cent for the first time in over a month.

Less than 68,000 new cases were detected across the country on Wednesday, while more than 81,000 people were declared to have recovered from the disease. Recoveries have exceeded the new infections on 22 of the last 27 days now. Over 73 lakh people have so far been infected with the disease, nearly 64 lakh of whom have recovered.

Transmission of Covid-19 from mother to baby: What new research shows (The Indian Express: 20201015)

https://indianexpress.com/article/explained/covid-19-mothers-baby-transmission-6734741/

The study covered 101 babies born to Covid-19-positive mothers in two New York hospitals from March 13 to April 24.

A doctor examines a pregnant woman at a district hospital in Allahabad, Uttar Pradesh. (AP Photo: Rajesh Kumar Singh, File)

A new study published in JAMA Pediatrics has found that transmission of SARS-CoV-2 from Covid positive mothers to babies is rare, if basic infection control practices are followed.

The findings suggest it may not be warranted to go for extensive measures like separating Covid-positive mothers from their new borns and avoiding breastfeeding.

The study covered 101 babies born to Covid-19-positive mothers in two New York hospitals from March 13 to April 24. Most of the babies roomed with their mothers, who were encourage to breastfeed but wore masks and washed hands and breasts with soap and water.

Only two of the new borns tested positive for SARS-CoV-2 but had no clinical evidence of illness.

ट्यूबरक्यूलोसिस

कोविड-19 के कारण पटरी से उतर सकता है टीबी उन्मूलन अभियान (Hindustan: 20201015)

https://www.livehindustan.com/health/story-covid-19-pandemic-may-derail-india-goal-of-eradicating-tuberculosis-3560838.html

कोविड-19 के कारण ट्यूबरक्यूलोसिस (टीबी) के मरीजों की पहचान और इलाज में दिक्कत आ रही है जिससे भारत समेत दुनिया के कई देशों में इस बीमारी से मरने वालों की संख्या इस साल तेजी से बढ़ सकती है। विश्व स्वास्थ्य संगठन की आज यहाँ जारी वैश्विक टीबी रिपोर्ट, 2020 में कहा गया है कि कोविड-19 और लॉकडाउन के कारण दुनिया भर के देशों में टीबी के मरीजों की पहचान में काफी कमी देखी गई है। टीबी के सबसे अधिक मरीजों वाले तीन देशों भारत, इंडोनेशिया और फिलीपींस में साल के पहले छह महीने में नये मरीजों की संख्या में 25 से 30 प्रतिशत की गिरावट आई है। पहचान कम होने से इस साल टीबी से होने वाली मौतों में भारी वृद्धि हो सकती है।

उल्लेखनीय है कि टीबी के मरीजों की पहचान होने के बाद उनका उपचार शुरू होने से इस बीमारी से बचा जा सकता है। नियमित उपचार के अभाव में टीबी से मौत का खतरा काफी अधिक होता है। दुनिया के एक-चौथाई से अधिक टीबी मरीज भारत में हैं। रिपोर्ट में कहा गया है "भारत में मार्च के आखिर से

लेकर अप्रैल के अंत तक राष्ट्रीय स्तर पर लॉकडाउन के कारण टीबी के नये मरीजों की साप्ताहिक और मासिक संख्या में 5० प्रतिशत से अधिक की गिरावट दर्ज की गई। इसके बाद मरीजों की पहचान कुछ बढ़ी है, लेकिन जून के अंत तक भी यह मार्च से पहले की तुलना में काफी कम थी। सरकारी और निजी दोनों तरह के अस्पतालों में मरीजों की पहचान में गिरावट रही है।"

भारत ने वर्ष 2025 तक टीबी को पूरी तरह समाप्त करने का लक्ष्य रखा है। मरीजों की पहचान नहीं हो पाने की स्थिति में उनका उपचार शुरू नहीं हो पायेंगा। ऐसे में टीबी उन्मूलन के लक्ष्य में देरी की आशंका है। रिपोर्ट के अनुसार, देश में जनवरी में टीबी के जितने मरीज सामने आये थे जून में उसकी तुलना में तीन-चौथाई से कम मरीजों की ही पहचान हो पाई है। अप्रैल में यह आँकड़ा घटकर 4० प्रतिशत के आसपास रह गया था। डब्ल्यूएचओ का अनुमान है कि वर्ष 2019 में देश में 26 लाख 4० हजार टीबी के मरीज थे जो दुनिया भर में टीबी मरीजों का 26 प्रतिशत है। इनमें 71 हजार एचआईवी से भी संक्रमित थे। प्रति लाख आबादी में 193 लोग इस रोग की चपेट में थे। भारत ने टीबी की स्थिति पर पहले जन सवेर्क्षण की रिपोर्ट वर्ष 2०21 में जारी करने का भी लक्ष्य रखा था, लेकिन महामारी के कारण सवेर्क्षण अभी शुरू भी नहीं हो पाया है। रिपोर्ट में कहा गया है कि पिछले साल करीब एक करोड़ लोग टीबी की चपेट में आये जिनमें 3० लाख की तो पहचान ही नहीं हो पाई थी। दुनिया में टीबी के कारण वर्ष 2०19 में 14 लाख लोगों की मौत हो गई। इनमें 31 प्रतिशत मामले भारत में से हैं। वहीं टीबी के जो मरीज एचआईवी से संक्रमित नहीं है उनमें होने वाली मौतों का 36 प्रतिशत भारत होती है। वैश्विक स्तर पर वर्ष 2015 से 2019 के बीच टीबी के उन्मूलन की दिशा में काफी प्रगति हुई थी। इस दौरान नये मरीजों की संख्या में नौ प्रतिशत और इस बीमारी से होने वाली मौतों में 14 प्रतिशत की गिरावट आई थी।

तनाव

तनाव को दूर करने के साथ वजन घटाने में भी कारगर है अखरोट, जानें इसके फायदे और सेवन का सही तरीका (Hindustan: 20201015)

https://www.livehindustan.com/lifestyle/story-walnut-benefits-in-hindi-weight-loss-stress-buster-and-immunity-booster-remedy-3562610.html

क्या आप हर रात कुछ न कुछ सोचते रहते हैं और कई तरह के ख्याल आपकी नींद उड़ा देते हैं? अगर आपका जवाब हां है, तो आप मेडिटेशन के साथ अखरोट खाना शुरू कर दीजिए, इससे आपकी यह समस्या काफी हद तक कम हो जाएगी। आज हम आपको खाली पेट भिगाए हुए अखरोट खाने के फायदे बता रहे हैं।

सूखे अखरोट की बजाय खाएं भीगा हुआ अखरोट

अखरोट को कच्चा खाने की बजाए अगर भिगोकर खाया जाए, तो इसके फायदे कई गुणा बढ़ जाते हैं। इसके लिए रात में 2 अखरोट को भिगोकर रख दें और सुबह के समय खाली पेट इसे खा लें। यकीन मानिए भीगे हुए बादाम खाना जितना फायदेमंद है उतना ही फायदेमंद भीगे हुए अखरोट खाना भी है। भीगा हुआ अखरोट कई बीमारियों से निजात दिलाने में मदद करता है।

डायबिटीज का खतरा करता है कम

ब्लड शुगर और डायबिटीज से बचना चाहते हैं, तो भीगे हुए अखरोट का सेवन आपके लिए फायदेमंद हो सकता है। बहुत सी स्टडीज में यह बात सामने आयी है कि जो लोग रोजाना 2 से 3 चम्मच अखरोट का सेवन करते हैं, उनमें टाइप-2 डायबिटीज होने का खतरा कम हो जाता है। अखरोट ब्लड शुगर लेवल को कंट्रोल करने में मदद करता है जिससे डायबिटीज का खतरा कम हो जाता है।

पाचन शक्ति होती है बेहतर

अखरोट फाइबर से भरपूर होता है, जो आपकी पाचन प्रणाली को दुरुस्त रखता है। पेट सही रखने और कब्ज से बचने के लिए फाइबर युक्त चीजें खानी जरूरी है। ऐसे में अगर आप रोजाना अखरोट का सेवन करते हैं, तो आपका पेट भी सही रहेगा और कब्ज भी नहीं होगा। भीगे हुए अखरोट को पचाना भी आसान हो जाता है।

हड्डियों की मजबूती के लिए खाएं अखरोट

अखरोट में ऐसे कई घटक और प्रॉपर्टीज पाए जाते हैं जो आपकी हड्डियों और दांतों को मजबूत बनाते हैं। अखरोट में अल्फा-लिनोलेनिक ऐसिड पाया जाता है जो हड्डियों को मजबूत करने में मदद करता है। इसके अलावा, अखरोट में मौजूद ओमेगा-3 फैटी ऐसिड सूजन को भी दूर करता है।

तनाव को दूर करने में कारगर

अखरोट खाने से कई मायनों में आपका तनाव और स्ट्रेस कम होता है और आपको अच्छी नींद भी आती है। अखरोट में मेलाटोनिन होता है, जो बेहतर नींद लाने में मदद करता है। वहीं, ओमेगा-3 फैटी ऐसिड ब्लड प्रेशर को संतुलित कर तनाव से राहत दिलाता है। भीगे अखरोट खाने से आपका मूड भी अच्छा होता है और फिर ऑटोमैटिकली आपका स्ट्रेस कम हो जाता है।

वेट लॉस करके आपको फिट रखता है अखरोट

अखरोट वजन कम करने में अहम भूमिका निभाता है। ये बॉडी के मेटाबॉलिज्म को बढ़ाता है और आपकी बॉडी से एक्स्ट्राभ फैट कम करने में हेल्प करता है। इसमें भरपूर मात्रा में प्रोटीन व कैलरी होती है, जो वजन को नियंत्रित रखने में मदद करती है। शोध में भी यह बात साबित हो चुकी है कि अखरोट का सेवन न सिर्फ वजन कम करता है, बल्कि उसे कंट्रोल में रखने में भी मदद करता है।

विश्व हैंड वॉश दिवस

विश्व हैंड वॉश दिवस: कोरोना से बचना है तो बार-बार अपने हाथों को धोएं (Hindustan: 20201015)

https://www.livehindustan.com/lifestyle/story-handwashing-day-2020-wash-your-hands-frequently-to-protect-against-covid-19-3562197.html

आज विश्व हैंड वॉश दिवस है। इस दिन को मनाने का उद्देश्य यही है कि लोगों को हाथ धोने के महत्त्व के बारे में जागरूक किया जा सके। चूंकि हाथ धोने और निरंतर हाथों की सफाई बनाए रखने से बहुत सी बीमारियों से बचा जा सकता है इसलिए हाथ धोने के महत्त्व को सभी को जानना जरूरी है। आज

पूरी दुनिया कोरोना वायरस की चपेट में आ चुकी है। कोरोना वायरस की कोई दवा या वैक्सीन ना होने की वजह से बचाव ही रोकथाम माना जा रहा है। मास्क पहनने के साथ ही हाथ धोना कोरोना से बचने का कारगर उपाय है। इस साल की थीम है- "हाथों की सफाई सभी के लिए (हैंड हाईजीन फॉर ऑल)।"

आज के समय में बहुत से डॉक्टरों का मानना है कि सैनिटाइजर की तुलना में साबुन का इस्तेमाल करना कहीं बेहतर है। वर्तमान में वायरस से निपटने और उसके बाद भी साबुन से हाथ धोना हमारी प्राथमिकता होनी चाहिए। कोविड-19 ने हमें अपने स्वास्थ की सुरक्षा के लिए सचेत रहना सिखा दिया है। आने वाले वक्त में हमें इस आदत को ऐसे ही बनाए रखना है।

सैनिटाइजर से बेहतर है साबुन

ज्यादातर डॉक्टरों की सलाह यही है कि सैनिटाइजर का प्रयोग आवश्यकता पड़ने पर ही करें। 20 सेकेन्ड तक साबुन से हाथ धोना आपको अनगिनत बीमारियों से बचा सकता है। हाथ गंदे होने पर सैनिटाइजर से हाथों की त्वचा खराब होने का खतरा बढ़ जाता है। त्वचा पर पड़ने वाली दरारों से वायरस के शरीर में प्रवेश करने की संभावना भी बढ़ जाती है। डॉक्टरों का कहना है कि जहां तक संभव हो साबुन और पानी का ही प्रयोग करें। यदि साबुन नहीं है तो ही सैनिटाइजर का इस्तेमाल करें।

कोरोना के दौर में बढ़ गयी है सैनिटाइजर की मांग

कोरोना नायरस के फैलने के बाद से ही सैनिटाइजर की मांग में गगनचुंबी इजाफा हुआ है। लोग ज्यादा से ज्यादा और अलग-अलग प्रकार के सैनिटाइजर खरीद रहे हैं। प्लास्टिक के छोटे डिब्बों में पैक होने की वजह से हैंड सैनिटाइजर को कैरी करना बहुत आसान है। एक ओर जहां सैनिटाइजर कुछ खास स्थितियों में ही काम आ सकते हैं वहीं दूसरी ओर तेल, ग्रीस आदि को निकालने में यह साबुन जितने कारगर नही हैं। सैनिटाइजर खरीदते वक्त कुछ बातों का ध्यान रखना जरूरी है। जैसे-

1. 70 प्रतिशत से अधिक अत्कोहल वाले सैनिटाइजर ही खरीदें। यह वायरस को खत्म करने में ज्यादा प्रभावशाली है।

2. बाजार में बिकने वाले अल्कोहल फ्री सैनिटाइजर न खरीदें। वे वायरस का खात्मा करने में सक्षम नही हैं।

इस वक्त बाजार में तरह-तरह के उत्पाद उपल्बध हैं। ऐसे में लोगों को लगता है कि हाथ धोना उतना प्रभावी नहीं है। आज विश्व हैंड वॉशिंग डे पर ज्यादा से ज्यादा लोगों को हाथ धोने के महत्त्व के बारे में

जागरूक कीजिए ताकि कोरोना वायरस से लड़ाई कुछ आसान हो जाए। साथ ही अपने हाथों की त्वचा का ख्याल रखने के लिए उन पर क्रीम लगाते रहें।

Global Handwashing Day 2020: The do's and don'ts of handwashing (The Indian Express: 20201015)

https://indianexpress.com/article/lifestyle/life-style/global-handwashing-day-2020-dos-and-donts-of-handwashing-6734779/

Global Handwashing Day 2020: "Frequent hand-washing is one of the best ways to avoid getting infected and spreading illness. Hand-washing requires only soap and water," says Dr. Rohan Sequeira, Consultant General Medicine, Jaslok Hospital & Research Centre

Global Handwashing Day 2020, how to properly wash hands, tips to wash hands, how many times to wash hands, best way to wash hands, coronavirus handwashing, indian express lifestyle, indian express news

It's generally best to wash your hands with soap and water, say experts. (Photo: Getty Images/Thinkstock)

The current health crisis has made everyone realise the importance of maintaining personal hygiene. Hand-washing, says Dr Rohan Sequeira, Consultant General Medicine, Jaslok Hospital & Research Centre, is an easy way to prevent infection, especially during these covid times. Understanding when to wash your hands, how to properly use hand sanitizer and how to get your children into the habit could be the biggest preventive measure you can take

"Frequent hand-washing is one of the best ways to avoid getting infected and spreading illness. Hand-washing requires only soap and water. Preferably a disinfectant soap. Also, studies have proven that liquid soaps have a slightly better effect than soap bars and gels," he tells indianexpress.com on the occasion of Global Handwashing Day.

As you touch people, surfaces and objects throughout the day, you accumulate infectious agents on your hands. In turn, you can infect yourself with these, by touching your eyes, nose or mouth. Although it's impossible to keep your hands germ-free, washing your hands frequently can help limit the transfer of bacteria, viruses and other microbes. Covid 19 is a respiratory virus and hence it is important to make sure your hands stay clean as they are the part of the body that touches your face all the time.

Always wash your hands before:

· Preparing food or eating

· Giving medicine to family members, or caring for a sick or injured person

· Inserting or removing contact lenses

Always wash your hands after:

· Using public spaces and articles like door handles, taxis, ATM and lift buttons.

Global Handwashing Day 2020, how to properly wash hands, tips to wash hands, how many times to wash hands, best way to wash hands, coronavirus handwashing, indian express lifestyle, indian express news It is advised to wash your hands after touching an animal. (Photo: Pixabay)

· Preparing food, especially raw meat or poultry

· Using the toilet or changing a diaper

· Touching an animal or animal toys, leashes or waste

· Blowing your nose, coughing or sneezing into your hands

· Treating wounds or caring for a sick or injured person

· Handling garbage, household or garden chemicals, or anything that could be contaminated — such as a cleaning cloth or soiled shoes

· Shaking hands with others should be avoided but if you do then sanitise and clean with soap and water after that

In addition, wash your hands whenever they look dirty.

How to wash your hands

It’s generally best to wash your hands with soap and water. Follow these simple steps:

· Wet your hands with running water — either warm or cold.

· Apply liquid, bar or powder soap.

· Lather well.

· Rub your hands vigorously for at least 20 seconds. Remember to scrub all surfaces, including the backs of your hands, wrists, between your fingers and under your fingernails.

· Rinse well.

· Dry your hands with a clean or disposable towel or air dryer.

· If possible, use a towel or your elbow to turn off the faucet.

Antibacterial soaps, such as those containing triclosan, are no more effective at killing germs than is regular soap.

पेट में मरोड़ उठने की समस्या

पेट में तेज मरोड़ उठने की वजह होती है यह समस्या, क्या आपने भी महसूस किया है ज्वार-भाटा जैसा दर्द? (Navbharat Times: 20201015)

https://navbharattimes.indiatimes.com/lifestyle/health/cramps-in-lower-abdominal-may-be-result-of-irritable-bowel-syndrome/articleshow/78676970.cms?story=7

पेट में तेज मरोड़ उठने की समस्या से परेशान हैं तो यहां जानें इसकी वजह। लूज मोशन के अतिरिक्त आईबीएस भी एक ऐसी समस्या होती है, जो पेट में मरोड़ की वजह बनती है।

पेट में मरोड़ उठने की समस्या से ज्यादातर लोग वाकिफ होते हैं। क्योंकि लूज मोशन के दौरान पेट के निचले हिस्से में जो ज्वार-भाटा (Tide) जैसा दर्द उठता है, वह अच्छे-अच्छे हष्ट-पुष्ट लोगों की हालत खराब कर देता है। लूज मोशन के अतिरिक्त आईबीएस भी एक ऐसी समस्या होती है, जो पेट में मरोड़ की वजह बनती है।

पेट में तेज मरोड़ उठना

इरिटेबल बॉल सिंड्रोम यानी आईबीएस एक ऐसी समस्या है, जिसमें रोगी को बार-बार इस बात का अहसास होता रहता है कि उसे प्रेशर आ रहा है। हालांकि यह सिर्फ एक फीलिंग ही होती है जबकि वास्तव में व्यक्ति को प्रेशर आ नहीं रहा होता है। यहां जानिए कि आपको बेचैन और असहज कर देनेवाली यह समस्या आखिर होती क्यों है?

बड़ी आंत से जुड़ी है यह समस्या

-आईबीएस की समस्या मुख्य रूप से बड़ी आंत (Large Intestine) में हुई गड़बड़ी या संक्रमण के कारण होती है। यह एक तरह का सामान्य डिसऑर्डर है, जिसके कारण पेट में मरोड़ (Cramps), लगातार दर्द, पेट फूलना, गैस बनना और डायरिया जैसी समस्याएं हो सकती हैं।

-आपको बता दें कि आईबीएस की समस्या ना तो एक दिन में शुरू होती है और ना ही इसे एक ही दिन में ठीक किया जा सकता है। बल्कि इसे ठीक करने के लिए आपको अपनी आदतों और खान-पान को ठीक करना होगा। अन्यथा हर दिन सुबह की शुरुआत पेट में मरोड़ के साथ होती रहेगी।

इस वहम को बाहर कर दें

-आप अपने दिमाग से इस वहम को बाहर कर दीजिए कि आईबीएस के कारण आपको कोलोरेक्टल कैंसर हो सकता है। ऐसा तभी संभव है, जब इस बीमारी के साथ शरीर के अंदर कोई अन्य गंभीर रोग और कैंसर का कारक पनप रहा हो।

- क्योंकि अपने आपमें आईबीएस आपके बॉल टिश्यूज में किसी तरह का बदलाव नहीं करती है। इसलिए यह कैंसर को और गंभीर बनाने की वजह तो हो सकती है लेकिन कैंसर पैदा करने की एकमात्र वजह नहीं हो सकती है।

क्यों उठती हैं पेट में मरोड़?

-आपके मन में यह सवाल जरूर आ रहा होगा कि आखिर पेट में मरोड़ उठने की समस्या होती ही क्यों है? आईबीएस के दौरान पेट के निचले हिस्से में ऐसा क्या बदल जाता है जो आपको पेट में सुइयां चुभने और तूफान आने जैसे दर्द का अहसास कराता है।

आंत में मांसपेशियों का सिकुड़ जाना

-आंत मसल्स की कई अलग-अलग परतों से बनी हुई होती हैं। मसल्स की ये परतें आपस में उस दौरान एक-दूसरे से मिलती हैं या स्पर्श करती हैं, जब आपके द्वारा खाए गए भोजन को आपकी आंत डायजेस्टिव ट्रैक्ट की तरफ ले जाती है।

-आंत में किसी तरह का संक्रमण होने पर या घाव होने पर जब आंत की परतों में संकुचन होता है तो यह दर्द की उत्पत्ति करता है। यानी आपके पेट में मरोड़ उठती है। इसके साथ ही जब आप पॉटी के लिए प्रेशर लगाते हैं या आपकी मांसपेशियां मल को बाहर निकालने का कार्य करती हैं तो इस दौरान हुए संकुचन से भी तेज दर्द उठता है।

नर्वस सिस्टम की गड़बड़ी

-जब शरीर के नर्व्स सिस्टम में खान-पान, लाइफस्टाइल, गलत दवाओं के सेवन या किसी अन्य कारण से कोई गड़बड़ी आ जाती है, तब आपके ब्रेन और डायजेस्टिव सिस्टम के बीच सिग्नल का आदान-प्रदान ठीक प्रकार से नहीं हो पाता है। इस कारण पेट में गैस बनने या पॉटी करते समय पेट के निचले हिस्से में बहुत तेज दर्द उठता है।

आंत में सूजन और गट बैक्टीरिया

-आईबीएस से ग्रसित कुछ लोगों की आंत में बहुत सारी इम्यूमन सिस्टम सेल्स विकसित हो जाती हैं। इन सेल्स के कारण आंत में सूजन की समस्या हो जाती है और तीव्र दर्द का अनुभव होता है।

-इसके साथ ही आंत में पाए जानेवाले गट बैक्टीरिया जिन्हें आप गुड और हेल्दी बैक्टीरिया के नाम से जानते हैं, उनकी स्थिति में बदलाव होना भी पेट में दर्द और मरोड़ की वजह बन सकता है।

Healthcare

Beds vacant at care centres as cases dip (The Tribune: 20201015)

https://www.tribuneindia.com/news/coronavirus/beds-vacant-at-care-centres-as-cases-dip-155916

No patient at civil hospitals in Sector 22, Mani Majra

With a decline in active cases and positivity rate reaching 90 per cent, occupancy of Covid care centres has decreased as a majority of patients are under home isolation.

The city has consistently been reporting a decline in active cases since September 16. Of 1,100 active patients in the city, around 800 patients are under home isolation while 150 patients each are in hospitals and Covid care centres.

The civil hospitals at Sector 22 and Mani Majra have no Covid patient while the Government Multi-Specialty Hospital at Sector 16 has a total of 21 patients.

The PGI has only 30 patients from Chandigarh, and the Government Medical College and Hospital, Sector 32, is taking care of 100 patients of Covid. Only two Covid care centres, Sood Dharamshala, Sector 22, and Dhanwantry Hospital, Sector 46, are partially occupied.

In April, the Health Department had created around 2,000 beds for patients in the Covid care centres under a contingency plan.

A doctor from the GMCH 32 said: “As Covid care centres in Panjab University have been closed down, Sood Dharamshala has started receiving more patients recently. The current occupancy is 112 patients at this centre.”

The Health Department has kept Panjab University three hostels, No. 9, 10 and International, as standby centres for Covid care, although their occupancy is nil at present.

The UT Director Health Services, Amandeep Kaur Kang, said: “Our Covid care centres at Panjab University are lying empty but we have reserved them for future as cases are expected to rise in winter and the festival season. The staff at the centres have been withdrawn for now. Our focus is now on testing and bringing down the daily positivity rate to at least 5 per cent.”

Centre appreciates UT efforts

Meanwhile, the Central Government today reviewed the Covid-19 situation of Chandigarh. The official spokesperson said the Union Home Secretary appreciated the arrangements by the Chandigarh Administration for tackling the pandemic.

During a video conference, Adviser Manoj Parida briefed that the recovery rate of Chandigarh was 90% and every 12th citizen had been tested as per the population concerned. He emphasised that arrangements such as beds, oxygen supply to hospitals as well as to Covid care centres are up-to-date.

Infectious Disease

Influenza drug shows promise against SARS-CoV-2 (Medical News Today: 20201015)

https://www.medicalnewstoday.com/articles/influenza-drug-shows-promise-against-sars-cov-2

Researchers have found that high doses of a drug called favipiravir strongly inhibit SARS-CoV-2 in hamsters. Favipiravir also prevented infection in healthy animals that had exposure to an infected cage mate.

Image credit: LumiNola/Getty Images.

It takes many years to develop a potent antiviral drug from scratch for a particular viral infection. Throughout the pandemic of COVID-19 — the disease that SARS-CoV-2 causes — researchers and clinicians have, therefore, had to focus on repurposing existing drugs.

Early on in the outbreak, one of the consequences of this was the wide administration of the antimalarial drug hydroxychloroquine to seriously ill patients.

In the absence of a proven animal model of COVID-19, doctors were relying on evidence from experiments using cell cultures, which suggested that the drug worked.

In June 2020, however, the first conclusive results from clinical research involving humans revealed that hydroxychloroquine was ineffective.

Virologists at the Rega Institute for Medical Research in Leuven, Belgium, have now developed a model of COVID-19 in Syrian hamsters, which they hope will provide more reliable information before the results of clinical trials become available.

They have already used their animal model to test different doses of favipiravir, an antiviral drug that has had approval in Japan since 2014 to treat pandemic influenza infections.

Stay informed with live updates on the current COVID-19 outbreak and visit our coronavirus hub for more advice on prevention and treatment.

High doses

The researchers found that while low doses of the drug gave poor results against SARS-CoV-2, high doses were effective.

“Other studies that used a lower dose had similar results,” says the senior researcher, Prof. Leen Delang. “The high dose is what makes the difference. That’s important to know because several clinical trials have already been set up to test favipiravir on humans.”

The team has also used the model to confirm that hydroxychloroquine is ineffective.

“Our hamster model is ideally suited to identify which new or existing drugs may be considered for clinical studies,” explains Prof. Johan Neyts, one of the other scientists involved in the research.

“In the early days of the pandemic, such a model was not yet available. At that time, the only option was to explore in patients whether or not a drug such as hydroxychloroquine could help them. However, testing treatments on hamsters provides crucial information that can prevent the loss of valuable time and energy with clinical trials on drugs that don’t work.”

– Prof. Johan Neyts

The results appear in the journal Proceedings of the National Academy of Sciences.

Model hamsters

The scientists chose Syrian hamsters to model COVID-19 because the SARS-CoV-2 virus replicates strongly in these animals shortly after infection. Also, unlike in mice, infected hamsters develop a mild lung disease similar to the early stages of COVID-19 in humans.

They treated some hamsters with the drugs for 4 days, starting 1 hour before they infected the animals by introducing the coronavirus into their noses.

In separate experiments to test whether the drugs could prevent infection, they treated healthy animals with the drugs for 5 days, starting 1 day before they entered a cage with an infected hamster.

At 4 days after infecting the hamsters or exposing them to an infected animal, the researchers imaged their lungs and measured how much viable virus was present in their organs.

Hydroxychloroquine proved ineffective in reducing levels of the virus or preventing transmission, whether or not the hamsters received it in combination with azithromycin (an antibiotic that doctors treating COVID-19 often give alongside the antimalarial).

However, favipiravir significantly reduced the number of viable virus particles present in the hamsters’ lungs, with higher doses leading to a more significant reduction.

Of the eight animals that received the highest dose, for example, six had no viable virus remaining in their lungs following the treatment.

Damage to their lungs was also less than that in the untreated animals, and there were no signs of adverse effects.

Similarly, high doses of favipiravir prevented healthy hamsters from becoming infected, whereas hydroxychloroquine provided no protection.

In fact, none of the animals in the favipiravir group had viable virus particles in their lungs after exposure to an infected cage mate, which suggests that the drug could work as a prophylactic.

“If further research shows that the results are the same in humans, the drug could be used right after someone from a high-risk group has come into contact with an infected person,” says Suzanne Kaptein, who led the research.

Preexisting conditions

Clinical trials of favipiravir are underway. However, a small earlier trial suggested that while the drug was effective for people with mild symptoms, it did not appear to work for more severely ill people with hypertension, diabetes, or both.

The authors of the hamster study also note that scientists do not know whether the drug penetrates lung tissue in humans as effectively as it does in these animals.

In addition, while this study suggested that short-term use of the drug is safe, a previous review concluded that safety concerns remain about its long-term use.

Mental Health

Researchers get to the roots of chronic stress and depression (Medical News Today: 20201015)

https://www.medicalnewstoday.com/articles/researchers-get-to-the-roots-of-chronic-stress-and-depression

A study in mice provides clues about the common molecular origins of chronic stress and depression. The discovery could inform new treatments for mood disorders.

Millions of years ago, our ancestors evolved the physiological responses needed to survive in the face of sudden threats from rivals and predators.

The release of hormones, including epinephrine (adrenaline), noradrenaline (norepinephrine), and the steroid hormone cortisol, trigger these “fight-or-flight” stress responses.

However, sustained or chronic stress that does not resolve when the immediate threat passes is a major risk factor for the development of mood disorders such as anxiety and depression.

Traumatic experiences, for example, in military combat, can also damage the body’s ability to regulate its stress responses, causing post-traumatic stress disorder.

People with these mood disorders have abnormally high and sustained stress hormone levels, which puts them at an increased risk of developing cardiovascular disease.

Researchers at the Karolinska Institutet in Stockholm, Sweden, suspected that a protein called p11 plays a pivotal role in damping down stress responses in healthy brains after an acute threat has passed.

Serotonin signal boost

Their previous research found that p11 enhances the effect of the hormone serotonin, which regulates mood and has a calming effect.

Unusually low levels of p11 have been found in the brains of people with depression and in individuals who died by suicide.

Mice with reduced p11 levels also show depression and anxiety-like behaviors. In addition, three different classes of antidepressants that are effective in humans increase levels of this protein in the animals' brains.

Now the Karolinska researchers have discovered that reduced p11 levels in the brains of mice make the animals more sensitive to stressful experiences.

The scientists also demonstrated that the protein controls activity in two distinct stress signaling pathways in the brain. It reduces not only the release of cortisol via one pathway but also adrenaline and noradrenaline via the other.

"We know that an abnormal stress response can precipitate or worsen depression and cause anxiety disorder and cardiovascular disease," says first author Vasco Sousa. "Therefore, it is important to find out whether the link between p11 deficiency and stress response that we see in mice can also be seen in patients."

The study, which appears in the journal Molecular Psychiatry, was a collaboration between the Karolinska Institutet and researchers at VU University in Amsterdam, The Netherlands.

Healthline Live Town Hall: Healthcare Policy Edition

Ask the experts about the future of healthcare at a Live Town Hall hosted by our sister site, Healthline, featuring healthcare policy experts and patient advocates.

Knockout mice

To investigate the role of p11 in stress responses, the scientists bred "knockout" mice that lack the gene that makes this protein.

They compared their behavior with normal mice using a variety of standard tests. These suggested that those without p11 experienced heightened stress and anxiety.

For example, in one test, mice pups were separated from their mothers for 3 hours a day. The researchers found that pups lacking p11 produced more high-pitched distress calls, known as ultrasonic vocalizations, compared with normal pups.

In another test of anxiety-like behavior, the team gave the adult mice a choice of spending time in a brightly lit area or a dark space. Mice that were deficient in p11 chose to spend less time in the brightly lit area compared with normal mice.

In addition, their heart rates took longer to return to normal after a stress-provoking stimulus.

The scientists also monitored stress hormone levels in the animals, revealing hyperactivity in two distinct stress pathways in the mice that lacked p11.

One such pathway, called the sympathetic-adrenal-medullary (SAM) axis, is responsible for the immediate surge in adrenaline and noradrenaline that occurs in frightening situations, triggering physiological changes such as increased heart rate.

The other pathway, known as the hypothalamus-pituitary-adrenocortical (HPA) axis, responds slightly less quickly and leads to the release of cortisol. This stress hormone raises blood sugar levels, among other metabolic changes, and suppresses functions that the body does not need for the fight-or-flight response.

Better treatments?

The findings could inform the development of more effective drugs for mood disorders, such as anxiety and depression, that redress chronic stress levels.

“One promising approach involves the administration of agents that enhance localized p11 expression, and several experiments are already being conducted in animal models of depression,” says Per Svenningsson, senior author of the new study.

“Another interesting approach which needs further investigation involves developing drugs that block the initiation of the stress hormone response in the brain.”

It is worth noting that all the research so far in this promising new field involves animal models of stress, anxiety, and depression, rather than human models.

While providing useful leads for drug development, animal lab studies may not reflect the complex interplay of social, environmental, and biological factors involved in the development of mental illness in people.

Alzheimer's disease

Air pollution linked to markers of neurodegenerative disease (Medical News Today: 20201015)

https://www.medicalnewstoday.com/articles/air-pollution-linked-to-markers-of-neurodegenerative-disease

Scientists recently found that the brains of young people exposed to air pollution display the markers of neurodegenerative diseases in their brain stems.

A new study has shown that young adults and children exposed to air pollution have the markers of Alzheimer's disease, Parkinson's disease, and motor neuron disease in their brain stems.

Alongside these markers were nanoparticles that appeared to originate from vehicles' internal combustion and braking systems.

The research, which appears in the journal Environmental Research, highlights the need to do more to protect young people from the effects of air pollution to avoid "a global neurodegenerative epidemic."

Neurodegenerative diseases

Neurodegenerative diseases, such as Parkinson's, Alzheimer's, and motor neuron disease affect a significant number of people across the world. For example, the Centers for Disease Control and Prevention (CDC) note that in 2014, about 5 million people in the United States had Alzheimer's disease.

Scientists have a good understanding of what happens to a person's brain and nervous system in each of these diseases. However, they are less clear about the fundamental causes.

The CDC, the National Institute on Aging, and the National Institute of Neurological Disorders and Stroke say that Alzheimer's, Parkinson's, and motor neuron disease are likely due to a combination of genetic and environmental factors.

Link to air pollution?

One environmental factor that may contribute to the development of neurodegenerative diseases is air pollution.

Research has shown a link between air pollution and Alzheimer's disease. However, the link between Parkinson's disease and air pollution is less clear, and there has been limited research on the effects of air pollution on motor neuron disease.

In the recent study, the researchers set out to identify the markers for Alzheimer's, Parkinson's, and motor neuron disease in the brain stems of deceased young people from Mexico City.

They wanted to see whether they could link these diseases to any indication of air pollution nanoparticles in the individuals' brain stems.

The researchers examined material from 186 autopsies that took place between 2004 and 2008. The individuals ranged in age from 11 months to 40 years.

Pathologists performed the initial autopsies a few hours after death and then stored the materials, including parts of the brain stem, at -80°C (-112°F) until the researchers examined them.

Signs of pollution and disease

In the brain stems, the researchers found markers for not only Alzheimer's disease but also Parkinson's disease and motor neuron disease. These markers included growths of nerve cells and misformed proteins that had caused tangles and plaques.

Significantly, alongside these markers, the researchers also found particles that were likely to be the product of vehicle air pollution.

According to Prof. Barbara Maher from Lancaster University in the United Kingdom, who is a co-author of the study, "[n]ot only did the brain stems of the young people in the study show the 'neuropathological hallmarks' of Alzheimer's, Parkinson's, and [motor neuron disease], they also had high concentrations of iron-, aluminum-, and titanium-rich nanoparticles in the brain stem — specifically in the substantia nigra and cerebellum."

Prof. Maher continues: "The iron- and aluminum-rich nanoparticles found in the brain stem are strikingly similar to those which occur as combustion- and friction-derived particles in air pollution (from engines and braking systems)."

"The titanium-rich particles in the brain were different — distinctively needle-like in shape; similar particles were observed in the nerve cells of the gut wall, suggesting these particles reach the brain after being swallowed and moving from the gut into the nerve cells which connect the brain stem with the digestive system."

According to the researchers, the areas where the individuals had lived would have exposed them to high levels of fine particulate matter.

Various factors cause this type of pollution, including dust, smoke, vehicle braking wear, and the interaction of atmospheric gases that vehicles and industrial sites produce during combustion.

In contrast, a control group of age-matched deceased people who lived in low pollution areas did not show the markers of neurodegenerative disease.

Neurodegenerative epidemic?

For the researchers, the co-presence of particles from urban air pollution and markers of neurodegenerative diseases is a serious cause for concern. The researchers are worried that an epidemic of neurodegenerative illness could occur as young people around the world who are exposed to air pollution grow older.

As Prof. Maher explains, "[i]t's critical to understand the links between the nanoparticles you're breathing in or swallowing and the impacts those metal-rich particles are then having on the different areas of your brain."

"Different people will have different levels of vulnerability to such particulate exposure, but our new findings indicate that what air pollutants you are exposed to, what you are inhaling and swallowing, are really significant in development of neurological damage."

"With this in mind, control of nanoparticulate sources of air pollution becomes critical and urgent."

– Prof. Barbara Maher